SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

साहित्य लेखन एवं उपाश्रित वर्गः राधाचरण गोस्वामी के विशेष संदर्भ में

रोहित रावत, शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
रोहित रावत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 21/06/2023
Revised on : -----
Accepted on : 28/06/2023
Plagiarism : 01% on 21/06/2023

शोध सार

साहित्य विचारों, भावनाओं और अनुभवों को व्यक्त करने एक माध्यम है। हिन्दी साहित्य लेखन सामाजिक सरोकार, यथार्थवाद और आम आदमी की समानता को प्रदर्शित करता है, और साथ ही अपने अतीत के यथार्थ को भी जीवंत रखता है। इसी कड़ी में राधाचरण गोस्वामी (1859–1925) एक मानवतावादी हैं और मानवता के लिए गहरी बौद्धिक चिंता रखते हैं और उनका लेखन सामाजिक रूप से स्थापित और उपाश्रित वर्ग का शक्तिशाली दस्तावेज है। साथ ही वे प्रभुत्वशाली वर्गों से अधीनस्थ वर्गों के अन्तर्विरोधों और द्वन्द्वों का आख्यान रचनेवाली कथादृष्टि की सामाजिक पक्षधरता की भी जाँच–परख करते हैं। उपाश्रित इतिहास–दृष्टि की मदद से राधचरण गोस्वामी के लेखन में किसानों, दलितों, स्त्रियों और अन्य अधीनस्थ वर्गों की उपस्थिति–अनुपस्थिति और उनकी यातना, सामाजिक सजगता तथा संघर्षशीलता की पहचान को आख्यानो में किस तरह अपनी रचनों में दर्ज करते है। यह शोध पत्र यह पता लगाने की कोशिश करता है कि राधाचरण गोस्वामी के साहित्य लेखन के संदर्भ में उपाश्रित शब्द कैसे लागू होता है और उपाश्रित वर्ग की आवाज को किस तरह व्यक्त करता है।

मुख्य शब्द

उपाश्रित, साहित्य, सामाजिक, अभिलेखगार, औपनिवेशिक.

परिचय

यह शोध पत्र उन्नीसवीं सदी के खड़ी बोली लेखक राधाचरण गोस्वामी द्वारा लिखित साहित्य में सामाजिक धारणा के पहलूओं को चित्रित करता है। साहित्य विभिन्न सामाजिक, आर्थिक कारकों का एक महतपूर्ण स्रोत है। साहित्य में प्रतिरोध और क्रांतिकारी कार्यों को करने की शक्ति है। उपन्यास साहित्यिक रचना

के साथ–साथ सामाजिक निर्मिति भी है और उसकी जनतान्त्रिकता केवल रचना की कला से नहीं आती, औपन्यासिक विमर्श की सामाजिक दृष्टि से भी निर्मित होती है। उपाश्रित इतिहास भी साहित्य से आकार लेता है जिसकी शुरुआत इतिहास के स्कूल से हुई थी। समकालीन भारतीय लेखकों ने काल्पनिक और गैर–काल्पनिक कथाओं को फिर से लिखा और साथ ही उपाश्रित आवाज़ों को स्पष्ट किया। हिंदी साहित्य के इतिहास में भारतेंदु काल की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण रही है, उसी भारतेंदु– मंडल के राधाचरण गोस्वामी एक विशेष सदस्य रहे और वृंदावन से इस मंडल का प्रतिनिधित्व करते थे। उन्होंने साहित्य, समाज और संस्कृति पर एक साथ बहुत लेखन किया साथ ही इस स्वस्थ परंपरा के भक्त, साधक, समाज सुधारक, साहित्यकार थे, जिसमें साहित्य उनके लिए नव चेतना का एक सशक्त माध्यम था। हिंदी के पहले समस्या मूलक लेखक और साथ ही हिंदी में ऐतिहासिक नाटककार भी थे। गोस्वामी जी के पिता, गल्लू जी महाराज एक धर्मनिष्ठ कवि थे, उनमें कोई धार्मिक कट्टरता और रूढ़िवादिता नहीं थी, प्रगति और सामाजिक क्रांति की उज्ज्वल जुबान और राष्ट्रवादी राजनीति की गहन चेतना थी। एक वर्ग के रूप में उपाश्रित लंबे समय से ऐतिहासिक आख्यानों में अत्यधिक प्रतिनिधित्व हीन और हाशिए पर रहे हैं इस वर्ग की आवाजें सरकारी अभिलेखों में बहुत कम दिखाई देती है। राधा चरण गोस्वामी ने अपने साहित्य लेखन में समाज में हाशिए पर रहे किसान, महिलाएं, मजदूर और जातिवाद, जैसी समस्याओं को सिर्फ लिखा ही नहीं बल्कि इन दुराचारों से संघर्ष लेना ही उनका जीवन था, गोस्वामी सामाजिक मानदंडों के हिंसक लेकिन अहिंसक विरोधी थे। वे जो कहते थे उस पर व्यवहार करते थे। वे अपने आचरण के माध्यम से गलत सामाजिक परंपराओं का शांतिपूर्वक विरोध करते थे। उनका लेखन बताता है कि औपनिवेशिक काल के समय शोषण की प्रकिया चल रही थी,समाज के दबे या हाशिए पर रहे लोगों को राधाचरण गोस्वामी अपने साहित्य लेखन के माध्यम से उनकी आवाजों को दर्ज किया, इस लिए इस विषय पर शोध आवश्यक हो जाता है क्योंकि कि साहित्य लेखन ने लोक चेतना को जगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस कथन से गोस्वामी जी के महत्व का अंदाजा लगाया जा सकता है। सामाजिक सरोकार उनके संपूर्ण लेखन का प्राथमिक स्रोत था। आंदोलन और विचारों की प्रगति में वे अपने युग के अन्य सभी लेखकों से बहुत आगे थे। वे एक क्रांतिकारी साहित्यकार, राष्ट्रवादी, और एक जबरदस्त कहानीकार भी थे। स्वतंत्र चेतना, स्वावलंबन, साहस, निडरता और स्वाभिमान उनके विशेष गुण थे।

शोध विधि

यह शोध अध्ययन एक गुणात्मक पद्धति का उपयोग करता है चूँकि यह अध्ययन राधाचरण गोस्वामी के साहित्य लेखन पर है इसलिए उनके के कुछ चुनिंदा साहित्य लेखन पर सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ पर ध्यान केंद्रित करते हुए एकत्र किए हुए डेटा का निरीक्षण और विश्लेषण करने के लिए पॉलिटिकल हिस्ट्रोग्राफी पद्धति और व्याख्यात्मक अनुसंधान विधि के तहत शोध से सम्बंधित प्राथमिक व द्वितीय स्रोतों का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन करते हुए शोध में उपयोग किए गए सैद्धांतिक आधार के अनुसार डेटा का विश्लेषण किया गया और विश्लेषण से निष्कर्ष निकाला जायेगा है।

उपाश्रित वर्ग इतिहास लेखन और अभिलेखकीय स्रोत

हजारों वर्षों के इतिहास–लेखन में यह स्पष्ट रूप से देखा गया है कि समाज में दो प्रकार के लोग मौजूद थेः समाज में वरिष्ठ और निम्न। वरिष्ठों को अधिक महत्व दिया गया है। अतः उपाश्रित वर्ग के अध्ययनों में यह अपेक्षा की जाती है कि वह इतिहास को फिर से लिखे, जिससे वह मुक्त हो। निम्न लोगों या आम आदमी के इतिहास को शामिल करने पर सहमति बनी है। लेखन की इस प्रवृत्ति में शोषित श्रमिकों, मजदूरों, उत्पीड़ित जाति और विचारों की दुनिया से परे महिलाओं की आय की पीड़ा शामिल है। निम्न वर्ग की चेतना के संबंध में चेतना और स्वायत्तता उपाश्रित अध्ययनों की नींव है। "उपाश्रित अध्ययन के काम में न केवल वैचारिक हिस्से तक बल्कि आम लोगों यानी गरीब किसानों, चरवाहों, श्रमिकों, मजदूरों, उत्पीड़ित जाति की महिलाओं की आजीविका तक पहुंचना आवश्यक है। वे भी इंसान हैं, सोचते भी हैं, फैसले लेते हैं, जीने का तरीका तय करते हैं और समाज में आगे बढ़ते हैं इसलिए उपाश्रित अध्ययन उन इतिहासकारों की अवहेलना करते हैं जो लोगों की कार्रवाई को उनकी चेतना से बाहर मानते हैं। इस प्रकार, निम्नवर्गीय अध्ययन उद्यम का मुख्य सरोकार लोगों की चेतना और उनके कार्यों की सराहना करना

है। इस चेतना का उचित विश्लेषण और इतिहासकारों द्वारा इसकी उचित मान्यता से उपाश्रित वर्ग को उस इतिहास के निर्माता के रूप में प्रस्तुत किया जाएगा जो वे जीते हैं।

एक वर्ग के रूप में सबाल्टर्न लंबे समय से ऐतिहासिक आख्यान में अत्यधिक प्रतिनिधित्वहीन और हाशिए पर है। इस वर्ग की आवाज ऐतिहासिक लेखों में शायद ही सरकारी सरकारी अभिलेखों में बहुत कम दिखाई देती है और जब भी राष्ट्रवादी संघर्ष में यह समूह संघर्ष में दिखाई देता था तो यह उपनिवेशों के बारे में औपनिवेशिक धारणाओं द्वारा चित्रित किया जाता था। रणजीत गुहा राष्ट्रवादी संघर्ष के इतिहास लेखन की अभिजात्य प्रकृति की पहचान करते हैं, जिसे वे औपनिवेशिक और राष्ट्रवादी या नव राष्ट्रवादी इतिहास लेखन के रूप में पहचानते हैं। औपनिवेशिक इतिहास लेखन में राष्ट्रीय आंदोलन को औपनिवेशिक राज्य और सत्ता और संसाधनों को साझा करने के लिए नए उभरते अभिजात वर्ग के बीच समझौते की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया था। इसके विपरीत राष्ट्रवादी और नव राष्ट्रवादी इतिहास लेखन आंदोलन को उन कुलीन नेताओं की पहल के रूप में देखता है जिन्होंने जनता को क्रांति की ओर अग्रसर किया। इन दोनों व्याख्याओं में कुछ समानता है। यानी ये दोनों उपाश्रित वर्ग को दूर रखते हैं। जन आंदोलनों को या तो मान्यता नहीं दी जाती है या उन्हें मुख्यधारा के राष्ट्रवादी आंदोलन से विचलन के रूप में देखा जाता है। इन जन आंदोलनों को आम तौर पर असंगठित हिंसक आंदोलनों के रूप में जाना जाता है।

यहां हम इन हाशिये वर्गों (Marginal Classes) के इतिहास को समझने के लिए स्रोत के रूप में अभिलेखागार की भूमिका पर भी ध्यान केंद्रित करेंगे। सबसे पहले जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है कि अभिलेखागार तटस्थ स्रोत नहीं हैं और न ही वे निष्पक्ष हैं। अभिलेखागार राज्य द्वारा बनाए गए है, इसलिए अभिलेखागार में अभिलेख राज्य की धारणा का प्रतिनिधित्व करते हैं इसलिए रणजीत गुहा संग्रह से परे देखने का आग्रह करते हैं,वह संग्रह की फेस वैल्यू नहीं बल्कि उसके स्वभाव के परे (विरुद्ध) संग्रह के अध्ययन का आग्रह करते है। इस बिंदु को एन स्टोलर के काम में बहुत अच्छी तरह से चित्रित किया गया है, वह बताती हैं कि औपनवेशिक अभिलेखागार के भीतर भी दृष्टिकोण की बहुलता है और मूल आबादी के बारे में औपनिवेशिक धारणा भी कुछ ऐसी नहीं है, जो पूरे समय स्थिर रहती है। ये दृष्टिकोण परिवर्तनशील होने के साथ–साथ अस्थिर भी हैं। वो जोर देती है कि संग्रह को अपने आप में एक ऐतिहासिक कलाकृति के रूप में एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में पढ़ना और स्वभाव के मुकाबले स्वभाव के साथ पढ़ना है।

इस उपाश्रित वर्ग की समझ को और आगे शाहिद अमीन ले जाते है, उन्होंने आधिकारिक खातों में उपाश्रित आवाज की अनुपस्थिति की ओर इशारा किया है, लेकिन यह भी सवाल किया है कि क्या कुछ औपनिवेशिक अभिलेखों में किसानों को दी गई आवाज वास्तव में उपाश्रित की आवाज है या यह किसानों के बारे में औपनिवेशिक धारणा है। यह बात ऐन स्टोलर द्वारा भी साझा की गई है जो बताती है, कि अक्सर औपनिवेशिक अधिकारियों ने अपनी कल्पना के माध्यम से या घटनाओं की अपनी धारणा के माध्यम से उनके खातों में अंतर को भर दिया। शाहिद अमीन ने भी रणजीत गुहा के समान ही अभिलेखागार से परे अध्ययन करने के बारे में सोचा और मौखिक स्रोतों के माध्यम से उपनगरों के इतिहास का निर्माण करने का प्रयास किया। लेकिन उनका काम इस मायने में मौलिक है कि इससे अभिलेखीय सामग्री के साथ–साथ राष्ट्रीय आंदोलन को देखने के पारंपरिक तरीके पर बहस हुई और उन स्रोतों को फिर से पढ़ने और फिर से पढ़ने का प्रयास किया गया जिन्हें रोमिला थापर आलोचनात्मक अध्ययन कहते हैं।

रंजीत गुहा विश्लेषण करने की कोशिश करते हैं कि अभिलेखीय स्रोत एक विशेष तरीके से उपवर्गों के साथ कैसे व्यवहार करते हैं। यहाँ भाषा का बहुत ही दबदबा है। भाषा अपने आप में निष्पक्ष नहीं है और अक्सर हम पाते हैं कि मूल्य आधारित शब्दों का चुनाव पाठ के अर्थ को काफी हद तक बदल देता है। उदाहरण के लिए औपनिवेशिक अभिलेखों में किसान इसी तरह हम विद्रोहियों के कार्यों को दर्शाने के लिए गरज के साथ ओलावृष्टि जैसी प्राकृतिक घटनाओं का उपयोग पाते हैं। शब्दों के चयन की एक खास प्रक्रिया जो एक विशेष दृष्टिकोण (जो कि

औपनिवेशिक दृष्टिकोण है) को दर्शाती है, जिसे रणजीत गुहा कार्यों और सूचकांकों की प्रक्रिया कहते हैं। गुहा इस प्रक्रिया को वास्तव में महत्वपूर्ण मानते हैं क्योंकि ये विचार अभिलेखीय स्रोत तक ही सीमित नहीं रहते हैं, बल्कि शब्दों और शब्दों के साथ विशिष्ट समझ को स्थानांतरित कर दिया जाता है समाजशास्त्री अर्जुन अप्पादुरई का तर्क है कि उत्तर–आधुनिकता के युग में "कार्टेशियन गैप" इच्छा, स्मृति, "स्मृति का स्थान और इसकी सामाजिक स्थिति" के बीच असमानता को दर्शाता है। संग्रह का कार्य मानव जाति के इतिहास को गढ़ने वालों द्वारा अनजाने में छोड़े गए अतीत के अवशेषों को संरक्षित करने के लिए सामाजिक आवेग का परिणाम है। इसके अलावा, जनता के बीच एक सुसंगत सामूहिक स्मृति को मजबूत करने की इच्छा प्रतीत होती है जो संग्रह की परंपरा को बढ़ावा देती है और पहचान की व्यापक भावना को मजबूत करती है।

उपाश्रित अध्ययन के स्रोत, जिस सामाजिक समूह पर इतिहास लिखा जाना है, वह बड़ी मात्रा में उपलब्ध नहीं है क्योंकि समाज के निम्न स्तर पर ये समूह अभिजन या अग्रणी लोगों की तरह अपने विचारों को व्यक्त करने में सक्षम नहीं हैं इसलिए उनके रहस्योद्घाटन को व्यक्त करने वाला साहित्य नहीं बना है। हमारे पास लिखित पत्राचार के दस्तावेज और स्रोत नहीं हैं इसलिए, सरकारी दस्तावेज, अधिकारिक रिपोर्ट, राजस्व विभाग की रिपोर्ट, जनगणना रिपोर्ट, पुलिस विभाग के दस्तावेज, न्यायिक दस्तावेज, लोककथाएं, लोकगीत, लोक–स्मरण, साक्षात्कार आदि का उपयोग उपाश्रित अध्ययन लिखने के लिए किया जाता है। उपरोक्त सभी स्रोतों के बारे में ध्यान और सोच के साथ–साथ अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, जनगणना, नृविज्ञान, पुरातत्व, मनोविज्ञान, भाषाविज्ञान आदि जैसे ज्ञान की विभिन्न शाखाओं की सहायता आवश्यक है, तभी उपाश्रित इतिहास लेखन किया जा सकता है।

तो हम अपनी चर्चा से इंगित कर सकते हैं, वह यह है कि संग्रह हालांकि साहित्यिक स्रोतों के विपरीत सूचनाओं का एक निष्पक्ष भंडार होने की भावना देता है, जिसकी व्याख्या करने की आवश्यकता होती है और लेखक की व्यक्तिपरक धारणाएं होती हैं, यह अंतर अत्यधिक मिथ्या है। अभिलेखागार साहित्यिक स्रोतों के रूप में पक्षपाती और व्यक्तिपरक भी हो सकते हैं, लेकिन किसी भी व्यक्ति के बजाय अभिलेखागार औपनिवेशिक धारणाओं के अभिलेखों से भरे हुए है।

राधचरण गोस्वामी और साहित्य लेखन में उपाश्रित वर्ग

भारतीय सामाजिक संदर्भ में 'सबाल्टर्न' पद्धति से गुजरते हुए मैला आंचल (फणीश्वरनाथ रेणु) एवं आधा गांव (राही मासूम रज़ा) के साथ साथ 'अलग–अलग वैतरणी' (शिवप्रसाद सिंह), 'डूब' (वीरेंद्र जैन), 'इदन्नम्'(मैत्रेयी पुष्पा) व 'मुखड़ा क्या देखें' (अब्दुल बिस्मिल्लाह) विशेष रूप से याद आते हैं। यूं तो उपन्यास और भी हैं लेकिन यह चर्चा उन्हीं उपन्यास पर केंद्रित है जिनमें इतिहास व समाज के'निम्नवर्गीय प्रसंग' (सबाल्टर्न) वृहत्तर समाज के साथ सीधे–सीधे मुठभेड़ की मुद्रा ना अपनाकर भी अपनी चेतना के बदलाव की प्रक्रिया को उद्घाटित करते हैं, लेकिन यह प्रक्रिया हमेशा ऊर्ध्वगामी न होकर, अक्सर अधोगामी भी होती है।संयोग नहीं है कि यहां यहां संदर्भित सारे उपन्यास ग्राम केन्द्रित हैं क्योंकि भारतीय समाज का कोई भी अध्ययन विशेषकर 'उपाश्रित ' अध्ययन ग्राम केन्द्रित हुए बिना पूर्ण नहीं हो सकता। निष्पत्तियों का सहारा लेकर समाजशास्त्री जिस सामाजिक रूप का मानकीकरण करता है, अक्सर उसका व्यवहारिक रूप भिन्न होता है। उपन्यासकार हाड़ मांस क्यो चरित्रों के माध्यम से सहज–बोध का सहारा लेकर वास्तविक जीवन स्थितियों का पुनः सृजन करता है, जो भले ही प्रतिनिधिक यथार्थ न हो, लेकिन समाज की दर्पण छवि अवश्य होता है इसलिए समाजशास्त्रीय अध्ययन की तुलना में यह अधिक प्रमाणिक एवं विश्वसनीय लगता है। सन् 1857 से सन् 1947 के बीच भारतीय साहित्य में जो भी देशी चिंतन हुआ उसकी व्यापक उपेक्षा की गई। अकारण नहीं आज तमाम क्षेत्रों में पाश्चात्य औपनिवेशिक चिंतन से देश को चलाया जा रहा है और सुनियोजित तरीके से नवजागरण के चिंतन और साहित्य की उपेक्षा की जा रही है

वीरेन्द्र यादव मानते हैं कि उपन्यास साहित्यिक रचना के साथ–साथ सामाजिक निर्मिति भी है और उसकी जनतान्त्रिकता केवल रचाव की कला से नहीं आती, औपन्यासिक विमर्श की सामाजिक दृष्टि से भी निर्मित होती है इसीलिए वे गोदान, झूठा सच, आधा गाँव, राग दरबारी, आग का दरिया व उदास नस्लें सरीखे कालजयी उपन्यासों

का विश्लेषण करते हुए सबाल्टर्न इतिहास–दृष्टि की मदद से इन उपन्यासों में किसानों, दलितों, स्त्रियों और अन्य अधीनस्थ वर्गों की उपस्थिति–अनुपस्थिति और उनकी यातना, सामाजिक सजगता तथा संघर्षशीलता की पहचान का आख्यान खोजते हैं। साथ ही वे प्रभुत्वशाली वर्गों से अधीनस्थ वर्गों के अन्तर्विरोधों और द्वन्द्वों का आख्यान रचनेवाली कथादृष्टि की सामाजिक पक्षधरता की भी जाँच–परख करते हैं।

राधाचरण गोस्वामी के लेखन का स्थायी महत्व केवल इस तथ्य में नहीं है कि उन्होंने कठोर सामाजिक वास्तविकता को प्रतिबिंबित किया और अर्ध–सामंती भारत की समकालीन आलोचना को प्रतिबिंबित किया। यह क्रांतिकारी लेखन है जो उनके ने साहित्य लेखन ने औपनिवेशिक भारतीय समाज में साहित्यिक प्रतिनिधित्व को एक आलोचनात्मक–यथार्थवादी लेखन करके हासिल किया है, जो उन्हें अपने समय के एक कथा और समस्या मूलक लेखक के रूप में सबसे अग्रणी साहित्यकार बना देता है, जिन्होंने भारत में सामाजिक कुरीतियों आलोचना और विरोध के रूप में वर्णन किया। यह राधाचरण गोस्वामी के व्यापक लेखन के माध्यम से औपनिवेशिक और सामंती व्यवस्था की आलोचना है जो उन्हें भारतीय साहित्य और साथ ही सांस्कृतिक इतिहास में उपाश्रितों की प्रमुख आवाज बनाती है। राधा चरण गोस्वामी के पहले के लेखन में, वे देशभक्ति और जनता के उपनिवेश विरोधी संघर्ष के माध्यम से आते हैं, लेकिन उनके लेखन में बड़े बदलाव ने किसानों के संघर्ष और महिलाओं की आवाज को अपने लेखन में लिखा ही नहीं बल्कि खुद उनकी आवाजों को भी उन्होंने सामाजिक एकता की शक्ति को पकड़ लिया और 'विधवा–विवाह विवरण','हिन्दू बाल विधवाओं का न्याय ईश्वर के हाथ है','बूढ़े मुंह मुहाँसे, लोग देखें तमासे' इस तरह के लेखन का सबसे अच्छा उदाहरण है।

व्यंग्य राधाचरण गोस्वामी के लेखन की बहुत बड़ी शक्ति है। हिंदी निबंध परंपरा में व्यंग्य का जो वेस्ट हैं वह को स्वामी जी के निबंधों में विशेष रूप से प्रस्तुत है। निबंध की भावभूमि को आधुनिक कलेवर देते हुए उनके निबंध नवीन परिस्थितियों और नवीन विचारों को बहन करते है। राजनीतिक उत्पीड़न, सामाजिक कुरूतियों, आर्थिक समस्याएं, धार्मिक अंधविश्वास आदि विषयों को उन्होंने अपने व्यंग्य से निशाना बनाया। स्टॉप न सैली की परिपाटी में लिखा गया उनका निबंध यम लोक की यात्रा बहुत चर्चित हुआ। डॉ रामविलास शर्मा ने उसे पूरे युग की प्रतिनिधि रचना मानते हुए उसकी प्रशंसा में लिखा – राधाचरण गोस्वामी अपने युग के सबसे उग्र विचारों के लेखक मालूम पड़ते हैं और अपने उग्र विचारों को प्रकट करने के लिए नए–नए ढंग खोज निकालने की प्रतिभा भी उनमें खूब दिखाई पड़ती है। पद रचना में ब्रज भाषा का आंचल धामे रहने वाले गोस्वामी के लेखों ने बंधुओं और नाटकों के माध्यम से खड़ीबोली गद्य में प्रखर और उग्र विचारों वाली अनेक रचनाएं हिंदी साहित्य को सौंपी जो बहुत बाद में पुस्तकाकार रूप में सामने आई। गोस्वामी द्वारा लिखे गए अपने संक्षिप्त जीवन चरित्र के आधार पर उन्होंने विभिन्न विषयों पर अनेक पत्रिकाओं में 200 के लगभग लेख लिखें जिन्हें उन्होंने संग्रह करके अपने पुस्तकालय में रखा। उन्होंने भारतीय समाज में नये वैचारिक विकल्प के लिए चाहत पैदा की। वह रुकने का नहीं, आगे बढ़ने का वक्त था–उन्होंने पूरी ईमानदारी और अपनी दूरदृष्टि से यह महसूस किया था। उन्हें संपूर्ण देश की फिक्र थी।

राधाचरण गोस्वामी का सम्पूर्ण नाट्य साहित्य पौराणिक, ऐतिहासिक और सामाजिक इन तीनों वर्गों में विभाजित किया जा सकता है किंतु चेतना की दृष्टि से यह समाज सुधार और देश भक्ति इन दो ही भागों के अंतर्गत आ जाता है। गोस्वामी के अनुसार विदेशी शासन विदेशी है। चाहे वह मुगलों का हो चाहे अंग्रेजों का। दोनों की मनोवृत्ति शोषक है अपनी 'भारत रोगी' रचना में उन्होंने तत्कालीन शासन की दूषित मनोवृति को दर्शाया है। गोस्वामी के 'बूढ़े मुंह मुंहासे लोग देंखे तमाशे में' उनकी प्रगतिशील विचारधारा अधिक उग्र हो उठी इसी में डॉ. रामविलास शर्मा का विचार है की भारतेंदु युग के नाटकों में राधाचरण गोस्वामी की यह रचना श्रेष्ठ है। इनका नपा तुला व्यंग्य सधा हुआ शिष्ट हास्य, गठा हुआ कथानक स्वाभाविक वार्तालाप आदि अन्य नाटकों में भी मिलेगा परंतु हिंदू–मुस्लिम किसानों की एकता और जमींदार के प्रति उनकी विद्रोह की भावना हिन्दी साहित्य में नयी है। 19वीं सदी के अन्य भाषाओं के साहित्य में भी यह आधुनिक दृष्टिकोण ढूंढने से ही मिलेगा, हिंदु–मुस्लिम तथा किसान – जमींदार समस्याओं का जैसा विवेचन युग चेतना ने किया था वह इस नाटक से स्पष्ट है।

मौला : अरे यार! अबकी साल पीर की दरगाह में कितनी सिन्नियां चढ़ाई, पर किसी से कुछ नहीं भया। दस मन गैंहू भी चल में नहीं आए, मर्जी गुसैंयां की। कल्लू: अरे कहीं मेह के बिना भी गैंहू होय है ? देखें लाला अब के कहा करें? मौला :और क्या करेंगे?भेज थोड़े ही छोड़ देंगे। कल्लू : तो तू कहा करैगो? मौला: मैं क्या अपनी ऐसी की तैसी करूंगा,अब के मर जाता तो अच्छा था । कहीं लाला ने हर और बैल नीलाम करा लिए, तो फिर भी मरे। जाने खुदा ताला की की क्या मर्जी है?बाप दादे की झोपड़ी भी कहीं न छोड़नी पड़े! कल्लू: लाला तो इतमें आठवें हैं। अच्छा तो आज मैं भी तेरी ओर होकर दो चार बातें कहने में कहर न करूंगा। राधाचरण गोस्वामी अपने प्रसिद्ध प्रहसन 'बूढ़े मुंह मुहाँसे लोग देखें तमासे' में औपनवेशिक जमींदारी व्यवस्था को अपने लेखन के द्वारा दिखाते है कि उस शोषणकारी व्यवस्था से किसान किस कदर परेशान और सहमा हुआ था, औपनवेशिक कल के भीतर एक शोषण की प्रक्रिया चल रही थी। इसमें लेखन में सामाजिक और मानवीयता यह है कि किसान धार्मिक मुद्दों से पहले सामाजिक परिस्थितियों को तरजीह दे रहे थे,जिससे उनके मध्य एकता बनी रहे।

हे भारतवासी महाशयों! हे दया सागर हिंदू संतानों! हे जीवरक्षा परायण आर्य बान्धवों! अपनी महादुःखित,जीवंतमृतक, असहाय, दीन–हीन, बाल विधवा बहनों का दुःख मोचन करों! वीर पुरुषों का काम पुरुषार्थ करने का है, कपड़े से सिर ढांक कर रोने का नहीं है! लोक –लज्जा और अपवाद के कण्टकों को पददलित करके इनके दुःख में से उद्धार करों! गोरक्षा में जैसा तुम्हारा इस समय उद्योग है, इन गौओं को बचाने की भी चेष्ठा करो। उनकी उपेक्षा इनका कुछ तुम से अधिक संबंध है। यदि तुम्हारे हृदय पर इनकी व्यथा कुछ असर करें,यदि विधवाओं के अश्रु तुम्हें खेद देने वाले हों यदि इनके उष्ण श्वास तुम्हारे हृदय को प्रज्वलित करने वाले हों तो अब विलंब का समय नहीं विधवाओं को अभयदान दीजिए, उनका आशीर्वाद लिजिए इस परम पुण्य का अनुष्ठान कीजिए! (विधवा विवाह विवरण)

विधवा–विवाह का विषय मे (राधाचरण गोस्वामी) कई भव्य वृद्ध स्त्रियों और कई बाल विधवाओं से बातचीत की, तो उन्होंने लज्जा और भय से बड़े संकोच से कहा कि 'हमसे क्या पूछते हो, हमसे इस विषय में पूछना वृथा है ।हम कुछ मुख से नहीं कह सकतीं । यदि कहें तो बेमौत मारी जायें। हमारी वह दशा है कि जैसा कोई मनुष्य फांसी दिया जाएगा और उसके लिए यह भी हुक्म हो कि अपनी फांसी दिये जाने के वास्ते रो भी ना सके, और किसी से मदद भी ना ले सके। यदि रोवें और मदद लें तो फांसी के पहले पहले बेंतों की मार खावें, तो इस दशा में वे क्यों रोवें? और क्यों किसी से मदद लें, और क्यों वृथा मार खायें? और क्यों दोहरी सजा भुगतें, केवल सिर नीचा करके फांसी पर चढ़ जायें। ईश्वर किसी ऐसे सुपुत्र को पैदा करे जो हम सब का दुःख मिटावे।' इनकी ये कातरोक्ति सुनकर मेरे नेत्रों में अश्रु भर आयें और तभी सेमैंने निश्चय कर लिया कि कुछ को अपनी शक्ति भर इसका इसका उद्योग करूंगा। (विधवा विवाह विवरण)

भारतवासी इस समय बड़ी आफ़त में है! फौज के सिपाही मरने जीने की आशा छोड़, घर वालों से मुंह मोड़, उनसे जगत का नाता तोड़, युद्ध क्षेत्र चले हैं! गरीब –गुर्बा कहार, भिस्ती, बारंबार, ग्रासकट जबरदस्ती पकड़ पकड़ कर युद्धाग्नि की समिधों के लिए एकत्र किए जाते हैं! (ईश्वर ब्रिटिश गवर्नमेंट के शत्रुओं का नाश करैं। ('भारतेन्दु' अंक 3, 28 जून 1885 ई.) राधा चरण गोस्वामी के लेखन के माध्यम से जो प्रश्न उठाये गये या और जो चिंताओं की रूपरेखा उन्होंने उन्नीसवीं आखिर और बीसवीं सदी के शुरूआत में जो मानवीय और समाजिक सवाल या अपने समय के समाजिक यथार्थ को दर्शाया वह पारस्परिक आश्रय, सम्बन्ध और द्वन्द्वात्मक स्वरूप के आइने में मूल्यांकन प्रक्रिया पर चिंता जाहिर करते हैं। यहां दो बातें बहुत महत्वपूर्ण है पहली राधाचरण गोस्वामी के साहित्य लेखन में सामाजिक सरोकार में लोक चेतना का विकास दिखता है और दूसरी वह इसकी शुरूआत खुद को केंद्र में रखकर कर करते है। उनका राजनीतिक या सामाजिक विषयों में धार्मिक दृष्टिकोण ना होकर मानवीय और भावनात्मक चेतना अपनाते है। उनके लेखन में समाजिक चेतना यथार्थ का स्थायी हिस्सा है, स्वाभाविक रूप से समय का जो यथार्थ है, रचनाएं उसी की हकदार हैं।

निष्कर्ष

हाशिए पर मौजूद सबाल्टर्न हमेशा अदृश्य प्रक्षेपण में दिखाई देता है लेकिन साहित्य की बदलती प्रकृति हमें

मजबूत और मुखर आवाज देती है और ये आवाज शोषकों के खिलाफ मुखर और नियोजित होती हैं जिनकी एकमात्र रुचि सत्ता और आधिपत्य को बनाए रखने में थी। विभिन्न समय के उपाश्रित साहित्य के विषयों और मुद्दों में मतभेद हैं। रंजीत गुहा समाज की विभिन्न कहानियों और मिथकों को सिद्ध करते हैं और "चंद्रा की मौत" की मृत्यु" में गुहा कथा की आवाज के साथ संलग्न हैं, विशेष रूप से कई तरह से साहित्य लेखन की आवाज उपाश्रित वर्ग अध्ययन का एक मुख्य स्रोत है। उपाश्रित वर्ग के नजरिए से राधाचरण गोस्वामी साहित्य लेखन उपाश्रित वर्ग की चेतना की प्रकिया निरंतर निगाह रखे हुए थे। भारतेंदु मंडल के सदस्य होने साथ वह समाजिक चेतना जगाने वाले नेता के रूप में दिखते है, महिलाओं के विषय लेखन जो गंभीरता वह भारतीय समाज में व्याप्त पितृसत्ता के खिलाफ अपना लेखान पुरजोर जारी रखा और जब भी उन इस से संबंधित सवाल हुए उन्होंने शास्त्रों से उनके जबाव भी दिये। उन्होंने महिलाओं के अनुभवों को दर्ज किया और उसे अपनी लेखनी से खुद आन्दोलन करते रहे। साहित्यक यथार्थ और साहित्यिक दृष्टि से उपाश्रित वर्ग को उन्होंने जोड़ने का काम बखूबी राधाचरण गोस्वामी ने अपने लेखन में किया है।

गोस्वामी का साहित्य लेखन विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रयोग कालीन रचनाएं होते हुए भी जनोन्मुखी है। वह जहां जन जीवन को विकासोन्मुख करने की यथार्थ रखता है वहां वह हिंदी साहित्य की रिक्त स्थान की पूर्ति करता हुआ आगे के उपन्यासकारों के लिए प्रशस्त मार्ग भी खोलता है। उनमें तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक, आदि ढांचे के प्रति तीव्र असंतोष की व्यंजना और साथ ही समस्त प्राण शोषक एवं घातक मनोवृत्तियों के लिए एक चुनौती भी है। वह युग यथार्थ की समस्त विकृतियों के भयंकर परिणाम समाज के समक्ष रखते हैं वहां उनके समाधान के लिए नवीन आदर्श भी। राधाचरण गोस्वामी का साहित्य लेखन समसामयिक समय पर अपनी छाप छोड़ता है, क्योंकि विधवा–विवाह, किसानों पर उनका साहित्य लेखन और रचनाओं में व्यंग्य और कटाक्ष भरी टिप्पणियां वर्तमान में भी उन्हीं मायनों में सार्थक है, जो तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों में थी। वर्तमान समय में भी सामाजिक मनोवृति में खासा बदलाव नहीं आया है। महिलाएं आज भी उपाश्रित वर्ग है उनकी आवाज़ को दबाया जाता, उपाश्रित किसान भी खेती छोड़ कर मजदूरी या अलग किसी पेशे में जीवनयापन के लिए हाथ आजमा रहे है। गोस्वामी महिला पुरुष के मध्य समानता की पैरवी करते रहे और वही वर्तमान समय में महिलाएं समान हक और सम्मान के लिए लगातार आंदोलन कर रही है। राधाचरण गोस्वामी के साहित्य लेखन का अध्ययन इसलिए और सार्थक हो जाता कि अतीत के समाजिक यथार्थ से हम वर्तमान की समाजिक चेतना और परिस्थितियों में सुधार ला सकें और अतीत से सबक लेकर उपाश्रित वर्ग को उसका सामाजिक हक और सम्मान मिल सके।

संदर्भ सूची

1. गोस्वामी राधाचरण, *व्यक्तित्व तथा कृतित्व,* डां. केदारदत्त तत्राड़ी, प्रकाशक चैतन्य गोस्वामी, वृंदावन 1995।
2. गोस्वामी राधाचरण, *हिन्दी नवजागरण,* भारतेन्दु मंडल के महत्वपूर्ण रचनाकार, संपादक कर्मेन्दु शिशिर, स्वराज प्रकाशन दरियागंज दिल्ली, 2013।
3. भारतेन्दु मंडल के प्रमुख रचनाकार राधाचरण गोस्वामी की चुनी रचनाएं, संपादक कर्मेन्दु शिशिर, प्रकाशक परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद 1990
4. भारतेन्दु प्रतिनिधि रचनाएंः एक, संपादक कृष्णदत्त पालीवाल, प्रकाशक सचिन प्रकाशन, दरियागंज दिल्ली, 1987।
5. गोस्वामी राधाचरण, रचना–संचयन, संपादक रामनिरंजन परिमलेंदु , प्रकाशक साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2019।
6. यादव वीरेंद्र, एक सबाल्टर्न प्रस्तावनाः उपन्यास और वर्चस्व की सत्ता, प्रकाशक राजकमल प्रकाशन, 2017, पेज 9–20
7. शर्मा कुमुद, हिन्दी के निर्माता, प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ, 2006।

8. पांडेय ज्ञानेंद्र, निम्नवर्गीय प्रंसग, भाग– 1, संपादक शाहिद अमीन, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली 1995,पेज 7–14

9. अमीन शाहिद, *स्मृति और इतिहास : चौरी चौरा,* 1922–1992, निम्नवर्गीय प्रंसग, भाग–2, संपादक शाहिद अमीन, ज्ञानेंद्र पांडेय, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली,पेज 177–191

10. गुहा रणजीत, *चंद्रा की मौत, निम्नवर्गीय प्रंसग,* भाग–2, संपादक शाहिद अमीन, ज्ञानेंद्र पांडेय, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1995 पेज 23–48

11. Guha Ranajit,*The Prose of Counter Insurgency,* Selected Subaltern Studies. United Kingdom: OUP USA, 1988. p.45-84.

12. Guha Ranajit, On some aspects of historiography of colonial India, Selected Subaltern Studies. United Kingdom: OUP USA, 1988. p.37-44

13. Laura Stoler Ann, Colonial archives and the arts of governance: On the content in the form, Refiguring the Archive. Netherlands:*Springer Netherlands,* 2012, page 83-102.

14. Laura Stoler Ann, "'In Cold Blood': Hierarchies of Credibility and the Politics of Colonial Narratives," *Representations,* no. 37 (1992): 151–189.

15. Appadurai Arjun, "Archive and Aspiration': In information is Alive, edited by Joke Brouwer and Arjen Mulder, Publisher NAI. 2003, Page 14-25.

16. Sahoo Abhijit, Subaltern Studies :A New Trend in Writing History, *Odisha Review,* November – 2014, Page 81-85.

****